1990 के दशक में विभिन्न राजनीतिक दलों में बड़ी अफ़रा-तफ़री मची। इस कार्टून की ही तरह कइयों को यह सब ऊँची चरखी की सवारी जैसा जान पड़ा। यहाँ कार्टून में राजीव गाँधी, वी.पी. सिंह, एल.के. आडवाणी, चंद्रशेखर, ज्योति बसु, एन.टी. रामाराव, देवीलाल, पी.के. महंत और के. करुणानिधि को चरखी पर सवार दिखाया गया है।

इस अध्याय में...

इस अध्याय में हम पिछले दो दशकों की भारतीय राजनीति का एक संक्षिप्त जायज़ा लेंगे। इस अवधि में कुछ जटिल किस्म के बदलाव आए। कई कारकों ने एक साथ मिलकर इस अवधि में अप्रत्याशित परिणाम दिए। राजनीति के इस नए दौर का पूर्वानुमान कर पाना असंभव था और अब भी इसे समझना बहुत कठिन है। इस दौर के बदलाव बड़े विवादास्पद हैं, क्योंकि इनके साथ संघर्ष के कुछ गहरे मसले जुड़े हुए हैं और हम सब अभी इन बदलावों से इतने दूर नहीं जा पाए हैं कि इनके स्वरूप को साफ़-साफ़ परख सकें। बहरहाल इस दौर के राजनीतिक बदलावों को लेकर हम कुछ बुनियादी सवाल कर सकते हैं:

- गठबंधन की राजनीति के उदय का हमारे लोकतंत्र पर क्या असर पड़ा है?
- मंडलीकरण क्या है? इसने राजनीतिक प्रतिनिधित्व के स्वभाव को किन रूपों में बदला है?
- राम जन्मभूमि आंदोलन ने क्या विरासत छोड़ी है?
- नीतिगत मामलों पर एक सर्व-सहमति सी बन गई है—इसका राजनीतिक विकल्पों के चयन के लिहाज़ से क्या असर हुआ है?

यह अध्याय इन सवालों के जवाब नहीं देता। इस अध्याय में आपको कुछ ज़रूरी सूचनाएँ दी गई हैं और कुछ तरीके बताए गए हैं, ताकि जब आप इस किताब को आखिर तक पढ़ लें, तो आप ये सवाल पूछ सकें और इनके जवाब तलाश सकें। ये सवाल राजनीतिक लिहाज़ से संवेदनशील हैं, लेकिन मात्र इसी कारण से हम इन सवालों को पूछने से बच नहीं सकते। आज़ादी के बाद की भारतीय राजनीति के इतिहास को आखिर पढ़ने का मकसद ही यही है कि हम अपने वर्तमान को समझ सकें।

© NCERT not to be republished

अध्याय 8

भारतीय राजनीति : नए बदलाव

12122CH09

1990 का दशक

आपने पिछले अध्याय में पढ़ा था कि इंदिरा गाँधी की हत्या के बाद राजीव गाँधी प्रधानमंत्री बने। इंदिरा गाँधी की हत्या के कुछ दिनों बाद ही 1984 में लोकसभा के चुनाव हुए। राजीव गाँधी की अगुवाई में कांग्रेस को इस चुनाव में भारी विजय मिली। 1980 के दशक के आखिर के सालों में देश में ऐसे पाँच बड़े बदलाव आए, जिनका हमारी आगे की राजनीति पर गहरा असर पड़ा।

पहला, इस दौर की एक महत्त्वपूर्ण घटना 1989 के चुनावों में कांग्रेस की हार है। जिस पार्टी ने 1984 में लोकसभा की 415 सीटें जीती थीं वह इस चुनाव में महज 197 सीटें ही जीत सकी। 1991 में एक बार फिर मध्यावधि चुनाव हुए और कांग्रेस इस बार अपना आँकड़ा सुधारते हुए सत्ता में आयी। बहरहाल, 1989 में ही उस परिघटना की समाप्ति हो गई थी, जिसे राजनीति विज्ञानी अपनी खास शब्दावली में 'कांग्रेस प्रणाली' कहते हैं। यह बात तो प्रकट ही है कि कांग्रेस एक महत्त्वपूर्ण पार्टी के रूप में कायम रही और 1989 के बाद भी देश पर किसी अन्य पार्टी के बजाय उसका शासन ज़्यादा दिनों तक रहा। लेकिन, दलीय प्रणाली के भीतर जैसी प्रमुखता इसे पहले के दिनों में हासिल थी, वैसी अब न रही।

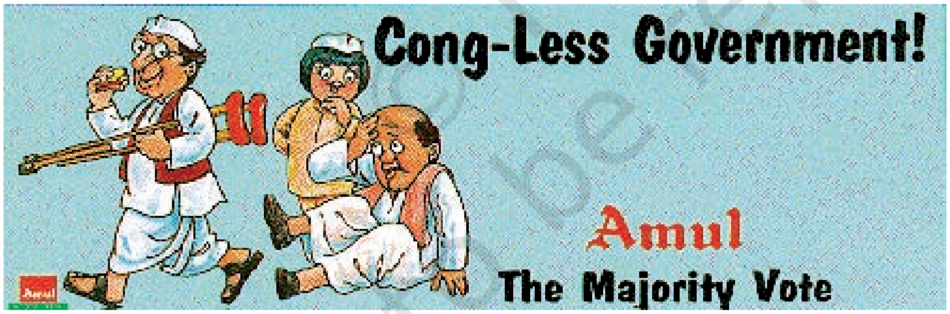

कांग्रेस नेता सीताराम केसरी ने देवगौड़ा की संयुक्त मोर्चा सरकार से अपना समर्थन वापस ले लिया।

दूसरा बड़ा बदलाव राष्ट्रीय राजनीति में 'मंडल मुद्दे' का उदय था। 1990 में राष्ट्रीय मोर्चा की नयी सरकार ने मंडल आयोग की सिफ़ारिशों को लागू किया। इन सिफ़ारिशों के अंतर्गत प्रावधान किया गया कि केंद्र सरकार की नौकरियों में 'अन्य पिछड़ा वर्ग' को आरक्षण दिया जाएगा। सरकार के इस फ़ैसले से देश के विभिन्न भागों में मंडल-विरोधी हिंसक प्रदर्शन हुए। अन्य पिछड़ा वर्ग को मिले आरक्षण के समर्थक और विरोधियों के बीच चले विवाद को 'मंडल मुद्दा' कहा जाता है। इसने 1989 के बाद की राजनीति में अहम भूमिका निभाई।

तीसरा, विभिन्न सरकारों ने इस दौर में जो आर्थिक नीतियाँ अपनायीं, वे बुनियादी तौर पर बदल चुकी थीं। इसे ढाँचागत समायोजन कार्यक्रम अथवा नए आर्थिक सुधार के नाम से जाना

© NCERT not to be republished

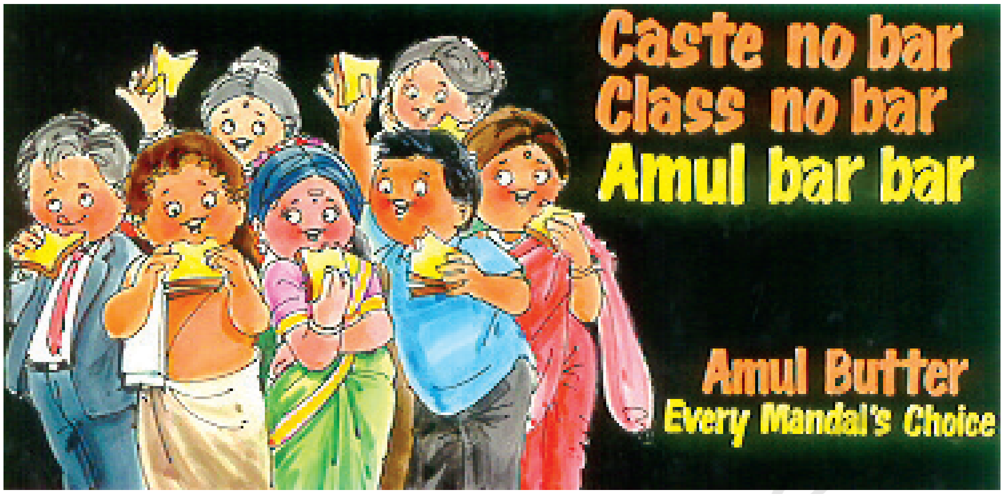

मंडलीकरण पर एक प्रतिक्रिया

गया। इनकी शुरुआत राजीव गाँधी की सरकार के समय हुई और 1991 तक ये बदलाव बड़े पैमाने पर प्रकट हुए। आज़ादी के बाद से अब तक भारतीय अर्थव्यवस्था जिस दिशा में चलती आई थी, वह इन नए आर्थिक सुधारों के कारण मूलगामी अर्थों में बदल गई। नयी आर्थिक नीतियों की विभिन्न आंदोलनों और संगठनों की तरफ़ से भरपूर आलोचना हुई। बहरहाल इस अवधि में जितनी सरकारें बनीं, सबने नयी आर्थिक नीति पर अमल जारी रखा।

चौथे, अयोध्या में राम जन्मभूमि मंदिर पर शताब्दियों से चले आ रहे विधिक एवं राजनीतिक विवाद ने भारत की राजनीति को प्रभावित करना आरम्भ किया जिसने अनेक

साभार: आर. के. लक्ष्मण, टाइम्स ऑफ़ इंडिया

तत्कालीन वित्तमंत्री मनमोहन सिंह और प्रधानमंत्री नरसिम्हा राव को 'नयी आर्थिक नीति' के शुरुआती दौर में दिखाता एक कार्टून।

राजनीतिक परिवर्तनों को जन्म दिया। राम जन्मभूमि आंदोलन के केन्द्रीय विषय बनने से धर्म निरपेक्षता और लोकतंत्र के विमर्श की दिशा बदल गई। इन परिवर्तनों की परिणति सर्वोच्च न्यायालय की संवैधानिक पीठ के निर्णय (जिसकी घोषणा 9 नवम्बर, 2019) के उपरांत अयोध्या में राम मन्दिर निर्माण के रूप में हुई।

इस सिलसिले की आखिरी बात यह है कि मई 1991 में राजीव गाँधी की हत्या कर दी गई और इसके परिणामस्वरूप कांग्रेस पार्टी के नेतृत्व में परिवर्तन हुआ। राजीव गाँधी चुनाव

समरसता का संदेश देता एक विज्ञापन

अभियान के सिलसिले में तमिलनाडु के दौरे पर थे। तभी लिट्टे से जुड़े श्रीलंकाई तमिलों ने उनकी हत्या कर दी। 1991 के चुनावों में कांग्रेस सबसे बड़ी विजयी पार्टी के रूप में सामने आयी। राजीव गाँधी की मृत्यु के बाद कांग्रेस पार्टी ने नरसिम्हा राव को प्रधानमंत्री चुना।

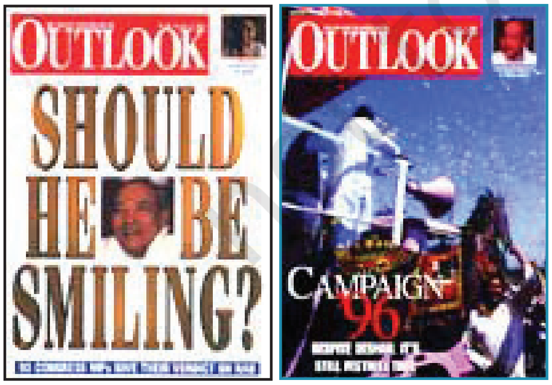

25 अक्तूबर 1995 | 1 मई 1996 | 20 अगस्त 2001 | 25 अक्तूबर 2004

कांग्रेस नेतृत्व कई बार सुर्खियों में छाया रहा

© NCERT not to be republished

गठबंधन का युग

1989 के चुनावों में कांग्रेस पार्टी की हार हुई थी, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि किसी दूसरी पार्टी को इस चुनाव में बहुमत मिल गया था। कांग्रेस अब भी लोकसभा में सबसे बड़ी पार्टी थी, लेकिन बहुमत में न होने के कारण उसने विपक्ष में बैठने का फ़ैसला किया। राष्ट्रीय मोर्चे को (यह मोर्चा जनता दल और कुछ अन्य क्षेत्रीय दलों को मिलाकर बना था) परस्पर विरुद्ध दो राजनीतिक समूहों – भाजपा और वाम मोर्चे – ने समर्थन दिया। इस समर्थन के आधार पर राष्ट्रीय मोर्चा ने एक गठबंधन सरकार बनायी, लेकिन इसमें भाजपा और वाम मोर्चे ने शिरकत नहीं की।

साभार: सुधीर तैलंग/एच.टी. बुक ऑफ कार्टून्स

वी.पी. सिंह के नेतृत्व वाली राष्ट्रीय मोर्चा सरकार को वाम मोर्चा (यहाँ प्रतीक रूप में ज्योति बसु) और भाजपा (यहाँ प्रतीक रूप में एल.के. आडवाणी) ने समर्थन दिया था।

कांग्रेस का पतन

कांग्रेस की हार के साथ भारत की दलीय व्यवस्था से उसका दबदबा खत्म हो गया। अध्याय पाँच में कांग्रेस प्रणाली की पुनर्स्थापना की चर्चा की गई थी। क्या आपको यह चर्चा याद है। 1960 के दशक के अंतिम सालों में कांग्रेस के एकछत्र राज को चुनौती मिली थी, लेकिन इंदिरा गाँधी के नेतृत्व में कांग्रेस ने भारतीय राजनीति पर अपना प्रभुत्व फिर से कायम किया। नब्बे के दशक में कांग्रेस की अग्रणी हैसियत को एक बार फिर चुनौती मिली। बहरहाल इसका मतलब यह नहीं है कि कांग्रेस की जगह कोई दूसरी पार्टी प्रमुख हो गई।

not to be republished

इस दौर में कांग्रेस के दबदबे के खात्मे के साथ बहुदलीय शासन-प्रणाली का युग शुरू हुआ। यह तो निश्चित ही है कि अपने देश में अनेक पार्टियाँ चुनाव लड़ती आयी हैं। हमारी संसद में हमेशा कई दलों के सांसद रहे हैं। 1989 के बाद एक नयी बात देखने में आयी। अब कई पार्टियाँ इस तरह उभरीं कि किसी एक-दो पार्टी को ही अधिकाँश वोट या सीट नहीं मिल पाते थे। इसका मतलब यह भी हुआ कि 1989 के बाद से लोकसभा के चुनावों में कभी भी किसी एक पार्टी को 2014 तक पूर्ण बहुमत नहीं मिला। इस बदलाव के साथ केंद्र में गठबंधन सरकारों का दौर शुरू हुआ और क्षेत्रीय पार्टियों ने गठबंधन सरकार बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। यद्यपि, पुनः 2014 तथा 2019 के लोकसभा चुनावों में भा.ज.पा. दल को अकेले बहुमत प्राप्त हुआ है।

खोज-बीन

अपने माता-पिता से 1990 के दशक के बाद से हुई घटनाओं के बारे में पूछें और इस समय की उनकी यादों को कुरेदें। उनसे पूछिए कि उस दौर की महत्त्वपूर्ण घटनाओं के बारे में वे क्या सोचते हैं। समूह बनाकर एक साथ बैठिए और अपने माता-पिता द्वारा बतायी गई घटनाओं की एक व्यापक सूची बनाइए। देखिए कि किस घटना का ज़िक्र ज़्यादा आया है। फिर, इस अध्याय में जिन सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बदलावों का ज़िक्र आया है उनसे तुलना कीजिए। आप इस बात पर चर्चा कर सकते हैं कि कुछ घटनाएँ क्यों कुछ लोगों के लिए ज़्यादा महत्त्वपूर्ण थीं, जबकि दूसरों के लिए नहीं।

गठबंधन की राजनीति

नब्बे का दशक कुछ ताकतवर पार्टियों और आंदोलनों के उभार का साक्षी रहा। इन पार्टियों और आंदोलनों ने दलित तथा पिछड़े वर्ग (अन्य पिछड़ा वर्ग या ओबीसी) की नुमाइंदगी की। इन दलों में से अनेक ने क्षेत्रीय आकांक्षाओं की भी दमदार दावेदारी की। 1996 में बनी संयुक्त मोर्चे की सरकार में इन पार्टियों ने अहम किरदार निभाया। संयुक्त मोर्चा 1989 के राष्ट्रीय मोर्चे के ही समान था, क्योंकि इसमें भी जनता दल और कई क्षेत्रीय पार्टियाँ शामिल थीं। इस बार भाजपा ने सरकार को समर्थन नहीं दिया। संयुक्त मोर्चा की सरकार को कांग्रेस का समर्थन हासिल था। इससे पता चलता है कि राजनीतिक समीकरण किस कदर छुईमुई थे। 1989 में भाजपा और वाम मोर्चा दोनों ने राष्ट्रीय मोर्चा की सरकार को समर्थन दिया था, क्योंकि ये दोनों कांग्रेस को सत्ता से बाहर रखना चाहते थे। इस बार वाममोर्चा ने गैर-कांग्रेसी सरकार को अपना समर्थन जारी रखा, लेकिन संयुक्त मोर्चा की सरकार को कांग्रेस पार्टी ने भी समर्थन दिया। दरअसल, कांग्रेस और वाममोर्चा दोनों इस बार भाजपा को सत्ता से बाहर रखना चाहते थे।

बहरहाल इन्हें ज़्यादा दिनों तक सफलता नहीं मिली और भाजपा ने 1991 तथा 1996 के चुनावों में अपनी स्थिति लगातार मज़बूत की। 1996 के चुनावों में यह सबसे बड़ी पार्टी बनकर उभरी। इस नाते भाजपा को सरकार बनाने का न्यौता मिला। लेकिन अधिकांश दल, भाजपा की नीतियों के खिलाफ़ थे और इस वजह से भाजपा की सरकार लोकसभा में बहुमत हासिल नहीं कर सकी। आखिरकार भाजपा एक गठबंधन (राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन—राजग)

© NCERT not to be republished

के अगुआ के रूप में सत्ता में आयी और 1998 के मई से 1999 के जून तक सत्ता में रही। फिर 1999 के अक्तूबर में इस गठबंधन ने दोबारा सत्ता हासिल की। राजग की इन दोनों सरकारों में अटल बिहारी वाजपेयी प्रधानमंत्री बने। 1999 की राजग सरकार ने अपना निर्धारित कार्यकाल पूरा किया।

साभारः अजीत मैनन/इंडिया टुडे

एक पार्टी के प्रभुत्व के दौर से लेकर बहुदलीय गठबंधन प्रणाली तक के सफ़र पर एक कार्टूनिस्ट की नज़र

इस तरह 1989 के चुनावों से भारत में गठबंधन की राजनीति के एक लंबे दौर की शुरुआत हुई। इसके बाद से केंद्र में 11 सरकारें बनीं। ये सभी या तो गठबंधन की सरकारें थीं अथवा दूसरे दलों के समर्थन पर टिकी अल्पमत की सरकारें थीं जो इन सरकारों में शामिल नहीं हुए। इस नए दौर में कोई सरकार क्षेत्रीय पार्टियों की साझेदारी अथवा उनके समर्थन से ही बनायी जा सकती थी। यह बात 1989 के राष्ट्रीय मोर्चा सरकार, 1996 और 1997 की संयुक्त मोर्चा सरकार, 1998 और 1999 की राजग, 2004 और 2009 की संप्रग सरकार पर समान रूप से लागू होती है। हालांकि, 2014 में यह प्रवृत्ति बदल गयी है।

आइए, अब तक जो हमने सीखा उसे इस बदलाव के साथ जोड़कर देखने की कोशिश करें। माना जा सकता है कि गठबंधन सरकारों का युग लंबे समय से जारी कुछ प्रवृत्तियों की परिणति है। पिछले कुछ दशकों से भारतीय समाज में गुपचुप बदलाव आ रहे थे और इन बदलावों ने जिन प्रवृत्तियों को जन्म दिया, वे भारतीय राजनीति को गठबंधन की सरकारों के युग की तरफ़ ले आयीं।

© NCERT not to be republished

केंद्रीय सरकार 1989 के बाद

अवधि	गठबंधन/सरकार में शामिल दल
दिसंबर 1989 – नवंबर 1990	**राष्ट्रीय मोर्चा**, वाम मोर्चा और भाजपा का समर्थन
नवंबर 1990 – जून 1991	**राष्ट्रीय मोर्चा** का एक तबका समाजवादी जनता पार्टी के नेतृत्व में; कांग्रेस का समर्थन
जून 1991 – मई 1996	**कांग्रेसः** एआईडीएमके तथा कुछ अन्य दलों का समर्थन
मई 1996 – जून 1996	**भाजपाः** अल्पमत सरकार
जून 1996 – अप्रैल 1997	कांग्रेस के समर्थन पर **संयुक्त मोर्चा** की सरकार
अप्रैल 1997 – मार्च 1998	कांग्रेस के समर्थन पर **संयुक्त मोर्चा** की सरकार
मार्च 1998 – अक्टूबर 1999; अक्टूबर 1999 – मई 2004	भाजपा-नीत **राजग गठबंधन**
मई 2004 – मई 2014	कांग्रेस-नीत **संप्रग** गठबंधन
मई 2014 के बाद	भाजपा-नीत **राजग गठबंधन**

वी.पी. सिंह

चंद्र शेखर

पी. वी. नरसिम्हा राव

अटल बिहारी वाजपेयी

एच.डी. देवगौड़ा

इंद्रकुमार गुजराल

अटल बिहारी वाजपेयी

मनमोहन सिंह

नरेंद्र मोदी

वर्तमान और पूर्व प्रधान मंत्रियों के बारे में अधिक जानकारी के लिए, देखें http://pmindia.gov.in/hi

नोटः यहाँ कुछ खाली स्थान छोड़ दिए गए हैं। इनमें आप किसी सरकार की मुख्य नीतियों, कामकाज और उन पर उठे विवाद की कुछ सूचनाएँ लिख सकते हैं।

© NCERT not to be republished

दूसरे अध्याय में हमने पढ़ा था कि शुरुआती सालों में कांग्रेस खुद में ही एक गठबंधननुमा पार्टी थी। इसमें विभिन्न हित, सामाजिक समूह और वर्ग एक साथ रहते थे। इस परिघटना को 'कांग्रेस प्रणाली' कहा गया।

पाँचवें अध्याय में हम यह बात पढ़ चुके हैं कि 1960 के दशक से विभिन्न समूह कांग्रेस पार्टी से अलग होने लगे और इन्होंने अपनी खुद की पार्टी बनायी। हम इस बात पर भी गौर कर चुके हैं कि 1977 के बाद के सालों में कई क्षेत्रीय दलों का उदय हुआ। इन सारे कारणों से कांग्रेस पार्टी कमज़ोर हुई, लेकिन कोई दूसरी पार्टी इस तरह से नहीं उभर पायी कि कांग्रेस का विकल्प बन सके।

अन्य पिछड़ा वर्ग का राजनीतिक उदय

इस अवधि का एक दूरगामी बदलाव था—अन्य पिछड़ा वर्ग का उदय। आप 'ओबीसी' शब्द से परिचित होंगे। इससे विचार-विवेचन की एक प्रशासनिक कोटि 'अन्य पिछड़ा वर्ग' अथवा 'अदर बैकवर्ड क्लासेज्' का संकेत किया जाता है। यह अनुसूचित जाति अथवा अनुसूचित जनजाति से अलग एक कोटि है, जिसमें शैक्षणिक और सामाजिक रूप से पिछड़े समुदायों की गणना की जाती है। इन समुदायों को 'पिछड़ा वर्ग' भी कहा जाता है। छठे अध्याय में हम यह देख चुके हैं कि पिछड़ी जातियों के अनेक तबके कांग्रेस से दूर जा रहे थे। उनमें कांग्रेस के लिए समर्थन कम होता जा रहा था। ऐसे में गैर-कांग्रेसी दलों के लिए एक जगह पैदा हुई और इन दलों ने इस तबके का समर्थन हासिल किया। आपको याद होगा कि गैर-कांग्रेसी दलों के राजनीतिक अभ्युदय की अभिव्यक्ति 1977 की जनता पार्टी की सरकार के रूप में हुई। जनता पार्टी के कई घटक मसलन भारतीय क्रांतिदल और संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी का ग्रामीण इलाकों के अन्य पिछड़े वर्ग में ताकतवर जनाधार था।

'मंडल' का लागू होना

1980 के दशक में अन्य पिछड़ा वर्गों के बीच लोकप्रिय ऐसे ही राजनीतिक समूहों को जनता दल ने एकजुट किया। राष्ट्रीय मोर्चा की सरकार ने मंडल आयोग की सिफ़ारिशों को लागू करने का फ़ैसला किया। इससे अन्य पिछड़ा वर्ग की राजनीति को सुगठित रूप देने में मदद मिली। नौकरी में आरक्षण के सवाल पर तीखे वाद-विवाद हुए और इन विवादों से 'अन्य पिछड़ा वर्ग' अपनी पहचान को लेकर ज़्यादा सजग हुआ। जो इस तबके को लामबंद करना चाहते थे, उन्हें इसका फायदा हुआ। इस दौर में ऐसी अनेक पार्टियाँ आगे आयीं, जिन्होंने रोज़गार और शिक्षा के क्षेत्र में अन्य पिछड़ा वर्ग को बेहतर अवसर उपलब्ध कराने की माँग की। इन दलों ने सत्ता में 'अन्य पिछड़ा वर्ग' की हिस्सेदारी का सवाल भी उठाया। इन दलों का कहना था कि भारतीय समाज में अन्य पिछड़ा वर्ग का एक बड़ा हिस्सा है। इसे देखते हुए अन्य पिछड़ा वर्ग का शासन में समुचित प्रतिनिधित्व और सत्ता में समुचित मौजूदगी तय करना लोकतांत्रिक कदम होगा।

मंडल आयोग की रिपोर्ट को लागू करने पर राजनीतिक माहौल सरगर्म हो उठा। जगह-जगह विरोध प्रदर्शन हुए।

मंडल आयोग

दक्षिण के राज्यों में अगर बहुत पहले से नहीं तो भी कम-से-कम 1960 के दशक से अन्य पिछड़ा वर्ग के लिए आरक्षण का प्रावधान चला आ रहा था। बहरहाल, यह नीति उत्तर भारत के राज्यों में लागू नहीं थी। 1977-79 की जनता पार्टी की सरकार के समय उत्तर भारत में पिछड़े वर्ग के आरक्षण के लिए राष्ट्रीय स्तर पर मज़बूती से आवाज़ उठाई गई। बिहार के तत्कालीन मुख्यमंत्री कर्पूरी ठाकुर इस दिशा में अग्रणी थे। उनकी सरकार ने बिहार में 'ओबीसी' को आरक्षण देने के लिए एक नयी नीति लागू की। इसके बाद केंद्र सरकार ने 1978 में एक आयोग बैठाया। इसके जिम्मे पिछड़ा वर्ग की स्थिति को सुधारने के उपाय बताने का काम सौंपा गया। आज़ादी के बाद से यह दूसरा अवसर था, जब सरकार ने ऐसा आयोग नियुक्त किया। इसी कारण आधिकारिक रूप से इस आयोग को 'दूसरा पिछड़ा वर्ग आयोग' कहा गया। आमतौर पर इस आयोग को इसके अध्यक्ष बिन्देश्वरी प्रसाद मंडल के नाम पर 'मंडल कमीशन' कहा जाता है।

बी.पी. मंडल (1918-1982): 1967-1970 तथा 1977-1979 में बिहार से सांसद चुने गए। दूसरा पिछड़ा वर्ग आयोग की अध्यक्षता की। इस आयोग ने अन्य पिछड़ा वर्ग को आरक्षण देने की सिफ़ारिश की। बिहार के समाजवादी नेता। 1968 में डेढ़ माह तक बिहार के मुख्यमंत्री पद पर रहे। 1977 में जनता पार्टी में शामिल हुए।

मंडल आयोग का गठन भारतीय समाज के विभिन्न तबकों के बीच शैक्षिक और सामाजिक पिछड़ेपन की व्यापकता का पता लगाने और इन पिछड़े वर्गों की पहचान के तरीके बताने के लिए किया गया था। आयोग से यह भी अपेक्षा की गई थी कि वह इन वर्गों के पिछड़ेपन को दूर करने के उपाय सुझाएगा। आयोग ने 1980 में अपनी सिफारिशें पेश कीं। इस वक्त तक जनता पार्टी की सरकार गिर चुकी थी। आयोग का मशविरा था कि पिछड़ा वर्ग को पिछड़ी जाति के अर्थ में स्वीकार किया जाए, क्योंकि अनुसूचित जातियों से इतर ऐसी अनेक जातियाँ हैं, जिन्हें वर्ण व्यवस्था में 'नीच' समझा जाता है। आयोग ने एक सर्वेक्षण किया और पाया कि इन पिछड़ी जातियों की शिक्षा संस्थाओं तथा सरकारी नौकरियों में बड़ी कम मौजूदगी है। इस वजह से आयोग ने इन समूहों के लिए शिक्षा संस्थाओं तथा सरकारी नौकरियों में 27 प्रतिशत सीट आरक्षित करने की सिफारिश की। मंडल आयोग ने अन्य पिछड़ा वर्ग की स्थिति सुधारने के लिए कई और समाधान सुझाए जिनमें भूमि-सुधार भी एक था।

1990 के अगस्त में राष्ट्रीय मोर्चा की सरकार ने मंडल आयोग की सिफ़ारिशों में से एक को लागू करने का फ़ैसला किया। यह सिफ़ारिश केंद्रीय सरकार और उसके उपक्रमों की नौकरियों में अन्य पिछड़ा वर्ग को आरक्षण देने के संबंध में थी। सरकार के फ़ैसले से उत्तर भारत के कई शहरों में हिंसक विरोध का स्वर उमड़ा। इस फ़ैसले को सर्वोच्च न्यायालय में भी चुनौती दी गई और यह प्रकरण 'इंदिरा साहनी केस' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। सरकार के फ़ैसले के खिलाफ़ अदालत में जिन लोगों ने अर्जी दायर की थी, उनमें एक नाम इंदिरा साहनी का भी था। 1992 के नवंबर में सर्वोच्च न्यायालय ने सरकार के निर्णय को सही ठहराते हुए अपना फ़ैसला सुनाया। राजनीतिक दलों में इस फ़ैसले के क्रियान्वयन के तरीके को लेकर कुछ मतभेद था। बहरहाल अन्य पिछड़ा वर्ग को आरक्षण देने के मसले पर देश के सभी बड़े राजनीतिक दलों में सहमति थी।

not to be republished © NCERT

राजनीतिक परिणाम

1980 के दशक में दलित जातियों के राजनीतिक संगठनों का भी उभार हुआ। 1978 में 'बामसेफ' (बैकवर्ड एंड माइनॉरिटी कम्युनिटीज़ एम्पलाइज़ फेडरेशन) का गठन हुआ। यह सरकारी कर्मचारियों का कोई साधारण-सा ट्रेड यूनियन नहीं था। इस संगठन ने 'बहुजन' यानी अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग और अल्पसंख्यकों की राजनीतिक सत्ता की ज़बरदस्त तरफ़दारी की। इसी का परवर्ती विकास 'दलित-शोषित समाज संघर्ष समिति' है, जिससे बाद के समय में बहुजन समाज पार्टी का उदय हुआ। इस पार्टी की अगुआई कांशीराम ने की। बहुजन समाज पार्टी (बसपा) अपने शुरुआती दौर में एक छोटी पार्टी थी और इसे पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश के दलित मतदाताओं का समर्थन हासिल था, लेकिन 1989 और 1991 के चुनावों में इस पार्टी को उत्तर प्रदेश में सफलता मिली। आज़ाद भारत में यह पहला मौका था, जब कोई राजनीतिक दल मुख्यतया दलित मतदाताओं के समर्थन के बूते ऐसी राजनीतिक सफलता हासिल कर पाया था।

दरअसल कांशीराम के नेतृत्व में बसपा ने अपने संगठन की बुनियाद व्यवहार केंद्रित नीतियों पर रखी थी। बहुजन (यानी अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग और धार्मिक अल्पसंख्यक) देश की आबादी में सबसे ज़्यादा हैं और संख्या के लिहाज़ से एक मजबूत राजनीतिक ताकत का रूप ले सकते हैं–बसपा के आत्मविश्वास को इस तथ्य से बड़ा बल मिला था। इसके बाद बसपा राज्य में एक बड़ी राजनीतिक ताकत के रूप में उभरी और उसने एक से ज़्यादा दफे यहाँ सरकार बनायी। इस पार्टी का सबसे ज़्यादा समर्थन दलित मतदाता करते हैं, लेकिन अब इसने समाज के विभिन्न वर्गों के बीच अपना जनाधार बढ़ाना शुरू किया है। भारत के कई हिस्सों में दलित राजनीति और अन्य पिछड़ा वर्ग की राजनीति ने स्वतंत्र रूप धारण किया है और इन दोनों के बीच अकसर प्रतिस्पर्धा भी चलती है।

कांशीराम (1934-2006): बहुजन समाज के सशक्तीकरण के प्रतिपादक और बहुजन समाज पार्टी (बसपा) के संस्थापक; सामाजिक और राजनीतिक कार्य के लिए केंद्र सरकार की नौकरी से इस्तीफ़ा; बामसेफ; डीएस-4 और अंततः 1984 में बसपा की स्थापना; कुशाग्र रणनीतिकार; आप राजनीतिक सत्ता को सामाजिक समानता का आधार मानते थे; उत्तर भारत के राज्यों में दलित राजनीति के संगठनकर्ता

© NCERT not to be republished

सांप्रदायिकता, धर्मनिरपेक्षता और लोकतंत्र

इस अवधि में आया एक दूरगामी परिवर्तन, धार्मिक पहचान पर आधारित राजनीति का प्रत्यक्ष उदय रहा जिसने धर्मनिरपेक्षता और लोकतंत्र के बारे में बहस को दिशा दी। हमने छठे अध्याय में पढ़ा था कि आपातकाल के बाद भारतीय जनसंघ का जनता पार्टी के साथ विलय हो गया था । जनता पार्टी के पतन और बिखराव के बाद पूर्ववर्ती जनसंघ के समर्थकों ने 1980 में भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) बनाई। आरंभ में भाजपा ने जनसंघ की अपेक्षा कहीं अधिक बड़ा राजनीतिक पटल अपनाया। भाजपा ने गांधीवादी समाजवाद के साथ-साथ सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को अपनी विचारधारा के रूप में अपनाया। किंतु 1984 के चुनावों में भाजपा को बहुत सफलता नहीं मिली। 1986 के बाद इस दल ने राष्ट्रवाद पर अपनी विचारधारा के केन्द्र के रूप में बल देना प्रारम्भ किया। भाजपा ने राजनीतिक लामबन्दी के लिए हिन्दुत्व की राजनीति को भी अपनाया।

हिन्दुत्व को विनायक दामोदर सावरकर ने भारतीय राष्ट्रीयता के आधार के रूप में लोकप्रिय किया था। इसका मूल आशय यह था कि एक भारतीय होने के लिए आवश्यक है कि वह भारतभूमि को अपनी 'पितृभूमि' और साथ ही 'पुण्यभूमि' भी स्वीकार करे। हिंदुत्व के विश्वासियों का तर्क है कि एक सुदृढ़ राष्ट्र का निर्माण एक संगठित राष्ट्रीय संस्कृति के आधार पर संभव है। वे यह भी मानते हैं कि भारत के सन्दर्भ में हिन्दुत्व, यह आधार प्रदान कर सकता है।

1986 की दो घटनाएं भाजपा की राजनीति का केन्द्र बिंदु बन गईं। पहला 1985 का शाहबानो वाद था। इस प्रकरण में एक 62 वर्षीय तलाकशुदा मुस्लिम महिला ने अपने भूतपूर्व पति से गुजारा भत्ता के लिए वाद किया था। सर्वोच्च न्यायालय ने शाहबानो के पक्ष में निर्णय दिया । पुरातन पंथी मुसलमानों ने सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को 'मुस्लिम पर्सनल लॉ' में हस्तक्षेप माना । कुछ मुस्लिम नेताओं की मांग पर सरकार ने मुस्लिम महिला (तलाक से जुड़े अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 1986 पारित किया जिसने सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को निरस्त कर दिया । सरकार के इस कार्य का अनेक महिला संगठनों, अनेक मुस्लिम समूहों तथा अधिकांश बुद्धिजीवियों ने विरोध किया। भाजपा ने कांग्रेस सरकार के इस कार्य को अल्पसंख्यक समुदाय को दी गयी अनावश्यक छूट और उसका तुष्टिकरण बताकर आलोचना की।

अयोध्या विषय

दूसरी प्रमुख घटना के रूप में अयोध्या विषय, देश के सामाजिक-सांस्कृतिक और राजनीतिक इतिहास में गहराई तक बैठा हुआ था जिसमें विभिन्न हितधारकों के भिन्न दृष्टिकोण थे। यह विषय श्री राम के जन्मस्थान, जोकि पवित्रतम धार्मिक स्थलों में से एक माना जाता है, के स्वामित्व से संबंधित विवाद था। अयोध्या में राम जन्मभूमि स्थान की महत्ता इस तथ्य से परखी जा सकती है कि 1528 से प्रारम्भ होकर 500 वर्ष के सुदीर्घ इतिहास में अनेक संघर्ष लखनऊ, बाराबंकी और फैजाबाद के गजेटियर में अंकित हैं। 1528 में श्री राम के जन्मस्थान पर तीन-गुम्बद ढाँचा निर्मित किया गया, परन्तु ढाँचे के आन्तरिक और बाह्य भागों में हिन्दू

क्या आप जानते हैं ?

28 नवंबर 1858 की एक बहुत ही रोचक घटना है, जब निहंग सिखों ने औपनिवेशिक प्रशासन द्वारा बलपूर्वक निकाले जाने से पहले, जन्मभूमि स्थल पर नियंत्रण कर लिया तथा पूजन और हवन किया ।

© NCERT not to be republished

प्रतीकों तथा अवशेषों को प्रत्यक्ष देखा जा सकता था। अतः अयोध्या राम जन्मभूमि विषय प्राचीन सभ्यता में राष्ट्रीय गौरव से जुड़ गया। कालान्तर में यह विषय एक लम्बे विधिक विवाद में परिणत हो गया जिसमें न्यायिक प्रक्रिया प्राम्भ होने के कारण 1949 में ढाँचे को सील कर दिया गया।

1986 में फैजाबाद (अब अयोध्या) जिला न्यायालय के एक निर्णय से तीन-गुम्बद ढाँचे की स्थिति में एक महत्वपूर्ण मोड़ आया जिसमें ढांचे का ताला खोल दिया गया और लोगों को वहाँ पूजा की अनुमति दे दी गई। यह विवाद अनेक दशकों से चल रहा था क्योंकि यह माना जाता था कि श्री राम के जन्मस्थान पर एक मन्दिर को ध्वस्त कर तीन-गुम्बद ढाँचा बनाया गया था। तथापि, मन्दिर का शिलान्यास हुआ किन्तु आगे का निर्माण प्रतिबन्धित रहा। इसे हिन्दू समुदाय ने श्री राम के जन्मस्थान विषयक अपनी चिन्ताओं की उपेक्षा समझा, जबकि मुस्लिम समाज ढाँचे पर अधिकार के आश्वासन की मांग करता रहा। तदनन्तर, स्वामित्व के अधिकार को लेकर दोनों समुदायों में तनाव बढ़ गया जिसका परिणाम अनगिनत विवादों और विधिक संघर्षों के रूप में दिखा। दोनों समुदाय दीर्घकाल से लम्बित इस विषय का समुचित समाधान चाहते थे। 1992 में ढांचे के ध्वंस के बाद कुछ आलोचकों ने माना कि इस घटना ने भारतीय लोकतन्त्र के सिद्धान्तों को बड़ी चुनौती दी है।

विधिक कार्यवाही से मैत्रीपूर्ण स्वीकृति

यह समझना महत्वपूर्ण है कि किसी भी समाज में विवाद होते ही हैं। परन्तु एक बहु-धार्मिक और बहु-सांस्कृतिक लोकतांत्रिक समाज में इन विवादों का हल सामान्यतः विधि की उचित प्रक्रिया से होता है। अनेक लोकतान्त्रिक और विधिक प्रक्रियाओं के जरिये जिसमें न्यायालय में सुनवाईयां, मध्यस्थता के प्रयास तथा जन आन्दोलन सम्मिलित हैं अन्ततः 9 नवम्बर 2019 को उच्चतम न्यायालय की संवैधानिक पीठ के 5-0 के निर्णय के फलस्वरूप अयोध्या विवाद का समाधान हो गया। इस निर्णय ने इस विवाद से सम्बन्धित विभिन्न हित धारकों के विरोधाभासी हितों का सामंजस्यपूर्ण समाधान किया।

इस निर्णय ने *श्री राम जन्मभूमि तीर्थ क्षेत्र ट्रस्ट* को विवादित स्थल राम मन्दिर निर्माण के लिए आवंटित कर दिया और संबंधित सरकार को *सुन्नी सेन्ट्रल वक्फ बोर्ड* को एक मस्जिद निर्माण के लिए उपयुक्त भूमि आवंटित करने का आदेश दिया। इस प्रकार से हमारे जैसे विविधतापूर्ण समाज में लोकतन्त्र संविधान की समावेशी भावना के अनुरूप संघर्ष के समाधान का मार्ग खोलता है। यह विषय पुरातात्विक उत्खनन और ऐतिहासिक अभिलेखों जैसे साक्ष्यों के आधार पर विधि की उचित प्रक्रिया का पालन करते हुए सुलझाया गया। समाज में व्यापक रूप से सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को उत्सवपूर्वक लिया गया। यह एक उदाहरण है जिसमें एक संवेदनशील विषय पर सर्वसम्मति का निर्माण किया गया, यह भारत के सभ्यतागत स्वभाव में निहित लोकतान्त्रिक प्रकृति की परिपक्वता को प्रदर्शित करता है।

© NCERT not to be republished

सुप्रीम कोर्ट की संवैधानिक पीठ के फैसले का जिक्र करने वाले अंश (9 नवम्बर, 2019)

"......संविधान के हृदय में कानून के शासन द्वारा कायम और लागू की गई समानता के प्रति प्रतिबद्धता है। हमारे संविधान के तहत, दैवीय उत्पत्ति की तलाश करने वाले सभी धर्मों, विश्वासों और पंथों के नागरिक कानून के अधीन हैं और कानून के समक्ष समान हैं। इस न्यायालय के प्रत्येक न्यायाधीश को न केवल संविधान और उसके मूल्यों को बनाए रखने का काम सौंपा गया है, बल्कि उन्हें बनाए रखने की शपथ भी दिलाई गई है। संविधान एक धर्म और दूसरे धर्म की आस्था और विश्वास के बीच अंतर नहीं करता है। सभी प्रकार के विश्वास, पूजा और प्रार्थना समान हैं..."

(विवरण के लिए देखें, सुप्रीम कोर्ट निर्णय, 9 नवंबर 2019, पृष्ठ 920, https://main.sci.gov.in/supremecourt/2010/36350/36350_2010_1_1502_18205_Judgement_09-Nov-2019.pdf)

"इस प्रकार यह निष्कर्ष निकाला गया है....... कि मस्जिद के निर्माण से पहले और उसके बाद से हिंदुओं की आस्था और विश्वास हमेशा यही रहा है कि भगवान राम का जन्मस्थान ही वह स्थान है जहां बाबरी मस्जिद का निर्माण किया गया है, जो कि ऊपर चर्चा किये गये दस्तावेजों और मौखिक साक्ष्यों से साबित होता है।"

(विवरण के लिए देखें, सुप्रीम कोर्ट निर्णय, 9 नवंबर 2019, पृष्ठ 1045, https://main.sci.gov.in/supremecourt/2010/36350/36350_2010_1_1502_18205_Judgement_09-Nov-2019.pdf)

© NCERT not to be republished

एक नयी सहमति का उदय

1989 के बाद की अवधि को कभी-कभार कांग्रेस के पतन और भाजपा के अभ्युदय की भी अवधि कहा जाता है। यदि आप इस दौर की राजनीति के जटिल चरित्र को समझना चाहते हैं, तो आपको कांग्रेस और भाजपा की चुनावी हार-जीत की तुलना करनी पड़ेगी।

कांग्रेस और भाजपा की चुनावी जीत-हार : बदलता परिदृश्य

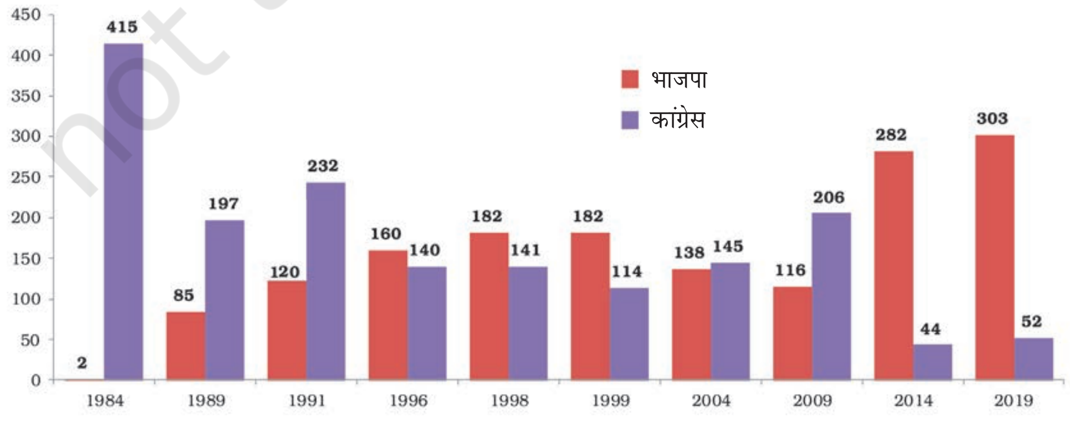

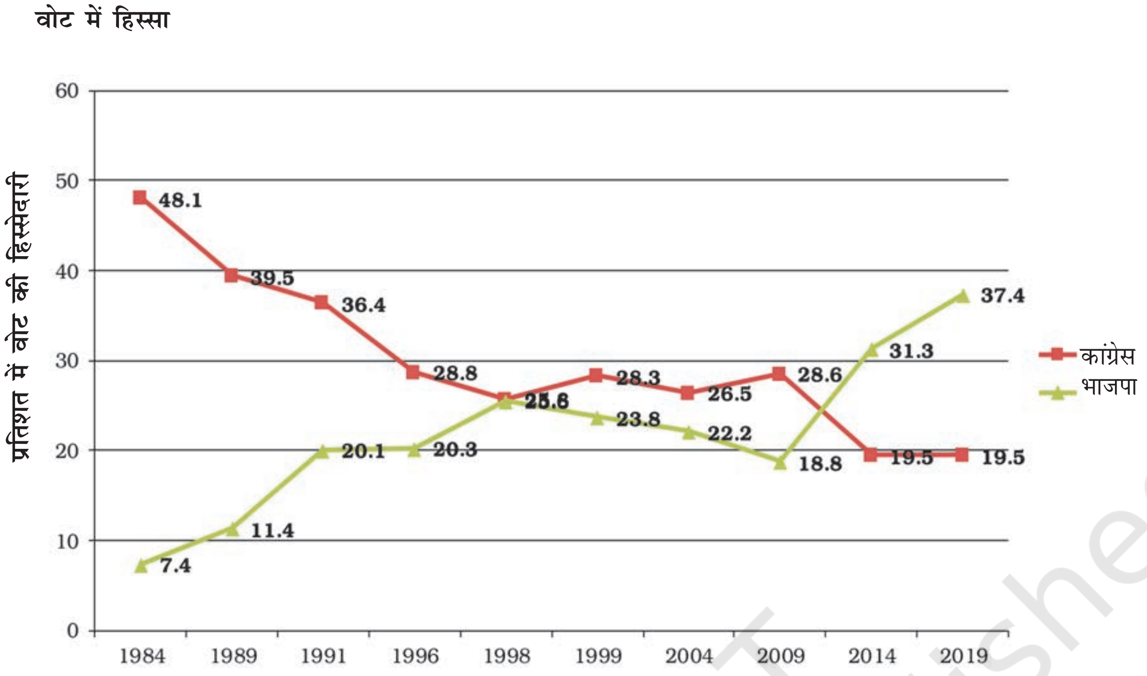

आइए, ऊपर दी गई तालिका की सूचनाओं के अर्थ खोजने की कोशिश करें।

- गौर कीजिए कि अधिकतर इस अवधि में भाजपा और कांग्रेस कठिन प्रतिस्पर्धा में लगे हुए थे। 1984 के चुनावों से तुलना करने पर आप इन पार्टियों की चुनावी सफलता में क्या अंतर पाते हैं?
- आप देखेंगे कि 1989 के चुनाव के बाद से, 1996, 2004 और 2009 को छोड़कर ज्यादातर समय दोनों पार्टियों कांग्रेस और भाजपा को मिले वोटों का योग 50 फीसदी से ज्यादा रहा है।
- आइए, दूसरे अध्याय की बातों को याद करें। आपने इस अध्याय में दो-पार्टी तंत्रों के बारे में पढ़ा था। आइए, इस किताब के आख़िरी पन्नों पर नज़र डालते हैं। यहाँ कांग्रेस और जनता पार्टी-तंत्र के आरेख पर ग़ौर कीजिए। मौजूदा दलों में ऐसे कौन-कौन-से दल हैं, जो न तो दलों के कांग्रेस परिवार में थे और न ही जनता पार्टी परिवार में? नब्बे के दशक में राजनीतिक मुकाबला भाजपा-नीत गठबंधन और कांग्रेस-नीत गठबंधन के बीच चला। क्या आप ऐसी पार्टियों की सूची बना सकते हैं, जो दोनों में से किसी गठबंधन में शामिल नहीं हैं?

लोकसभा चुनाव (2004-2019)

2004 के चुनावों में कांग्रेस भी पूरे ज़ोर के साथ गठबंधन में शामिल हुई। राजग की हार हुई और संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (संप्रग) की सरकार बनी। इस गठबंधन का नेतृत्व कांग्रेस ने किया। संप्रग को वाम मोर्चा ने समर्थन दिया। 2004 के चुनावों में एक हद तक कांग्रेस का पुनरुत्थान भी हुआ। 1991 के बाद इस दफा पार्टी की सीटों की संख्या एक बार फिर बढ़ी। बहरहाल, 2004 के चुनावों में राजग और संप्रग को मिले कुल वोटों का अंतर बड़ा कम था। इस तरह दलीय प्रणाली सत्तर के दशक की तुलना में एकदम ही बदल गई है।

© NCERT not to be republished

भारत-अमेरिका परमाणु समझौते के मुद्दे पर जुलाई 2008 में वाम दलों द्वारा समर्थन वापस लेने के बावजूद कांग्रेस के नेतृत्व वाली संप्रग सरकार ने अपना कार्यकाल पूरा किया। 2009 में 15वीं लोकसभा के लिए चुनाव हुए। परिणाम कांग्रेस के पक्ष में आए, वास्तव में, कांग्रेस की सीटों की संख्या में वृद्धि देखी गई (2004 में 145 से 2009 में 206) और कांग्रेस के नेतृत्व वाली संप्रग सरकार बनी। डॉ. मनमोहन सिंह ने दूसरे कार्यकाल के लिए प्रधानमंत्री के रूप में शपथ ली और एक बार फिर संप्रग की गठबंधन सरकार का नेतृत्व किया।

भारतीय जनता पार्टी ने सितंबर 2013 में नरेंद्र मोदी (तत्कालीन गुजरात के मुख्यमंत्री) को अपना प्रधानमंत्री पद का उम्मीदवार घोषित किया। 2014 में हुए 16वें लोकसभा चुनाव में नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में भाजपा को स्पष्ट बहुमत मिला। भाजपा ने अपने दम पर 282 सीटें जीतीं। 30 साल बाद एकल पार्टी बहुमत हासिल करने वाली पहली पार्टी बन गई। अपने स्वयं के एकल दल के बहुमत के बावजूद, भाजपा ने अपने गठबंधन सहयोगियों के साथ राजग सरकार बनाने का विकल्प चुना।

वर्ष 2014, भारतीय राजनीति के लिए एक ऐतिहासिक क्षण था। नरेंद्र मोदी के नेतृत्व वाली राजग सरकार ने सामाजिक क्षेत्र, विदेश नीति और आर्थिक नीति में तेजी से निर्णय लिए। 2019 के लोकसभा चुनाव में भाजपा फिर से 303 सीटों के साथ विजयी हुई। जब भाजपा को पूर्ण बहुमत मिल रहा है तब भी गठबंधन की राजनीति की मान्यता अभी भी प्रासंगिक है।

इस तरह दलीय प्रणाली सत्तर के दशक की तुलना में एकदम ही बदल गई है।

बढ़ती सहमति

बहरहाल, अनेक महत्त्वपूर्ण मसलों पर अधिकतर दलों के बीच एक व्यापक सहमति है। कड़े मुकाबले और बहुत-से संघर्षों के बावजूद अधिकतर दलों के बीच एक सहमति उभरती सी जान पड़ रही है। इस सहमति में चार बातें हैं।

पहला, नयी आर्थिक नीति पर सहमति : कई समूह नयी आर्थिक नीति के खिलाफ़ हैं, लेकिन ज़्यादातर राजनीतिक दल इन नीतियों के पक्ष में हैं। अधिकतर दलों का मानना है कि नई आर्थिक नीतियों से देश समृद्ध होगा और भारत, विश्व की एक आर्थिक शक्ति बनेगा।

दूसरा, पिछड़ी जातियों के राजनीतिक और सामाजिक दावे की स्वीकृति : राजनीतिक दलों ने पहचान लिया है कि पिछड़ी जातियों के सामाजिक और राजनीतिक दावे को स्वीकार करने की ज़रूरत है। इस कारण आज सभी राजनीतिक दल शिक्षा और रोज़गार में पिछड़ी जातियों के लिए सीटों के आरक्षण के पक्ष में हैं। राजनीतिक दल यह भी सुनिश्चित करने के लिए तैयार हैं कि 'अन्य पिछड़ा वर्ग' को सत्ता में समुचित हिस्सेदारी मिले।

तीसरा, देश के शासन में प्रांतीय दलों की भूमिका की स्वीकृति : प्रांतीय दल और राष्ट्रीय दल का भेद अब लगातार कम होता जा रहा है। हमने इस अध्याय में देखा कि प्रांतीय दल केंद्रीय सरकार में साझीदार बन रहे हैं और इन दलों ने पिछले बीस सालों में देश की राजनीति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

© NCERT not to be republished

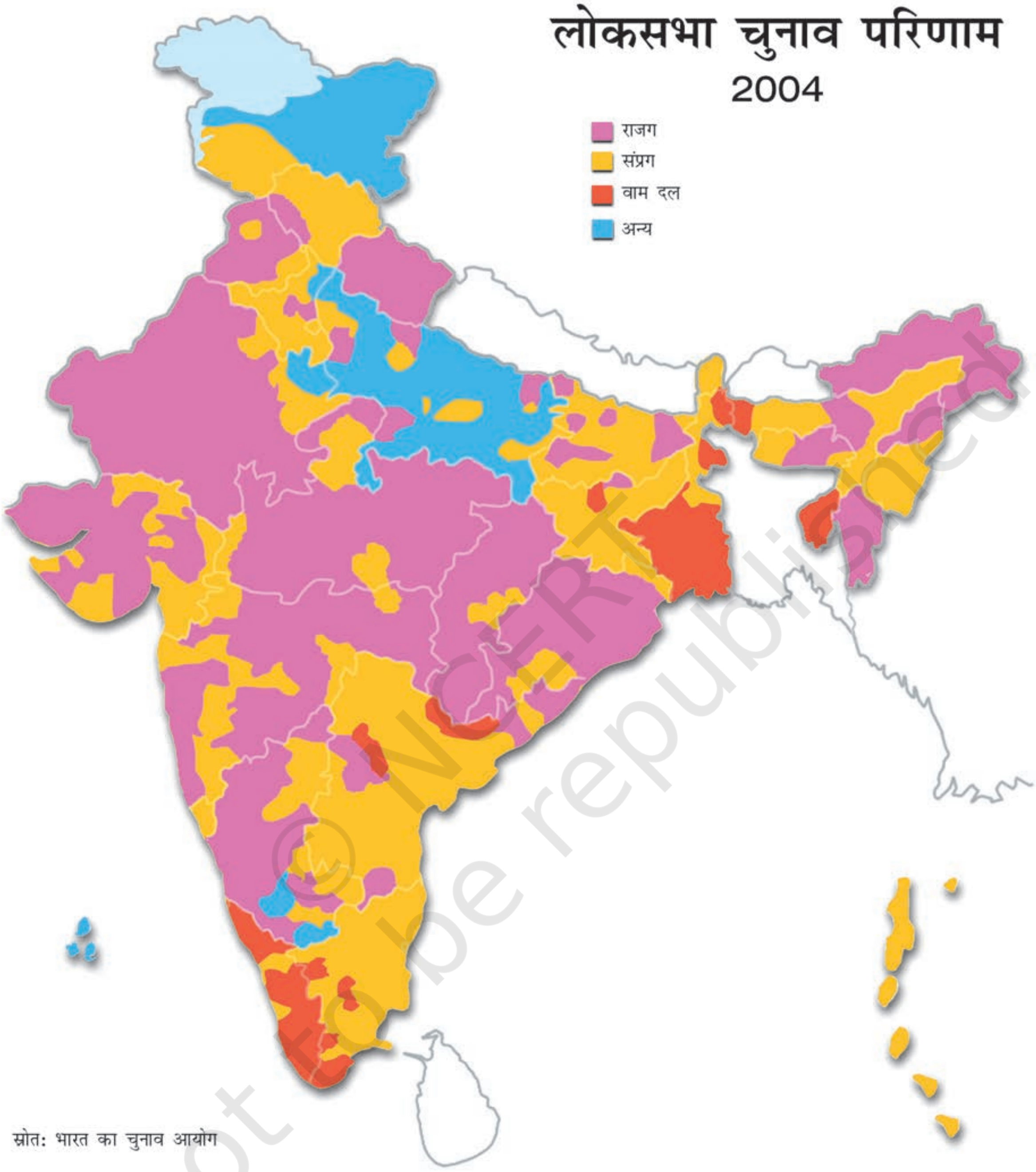

स्रोतः भारत का चुनाव आयोग

© NCERT not to be republished

चौथा, विचारधारा की जगह कार्यसिद्धि पर ज़ोर और विचारधारागत सहमति के बगैर राजनीतिक गठजोड़ : गठबंधन की राजनीति के इस दौर में राजनीतिक दल विचारधारागत अंतर की जगह सत्ता में हिस्सेदारी की बातों पर ज़ोर दे रहे हैं, जो मिसाल के लिए अधिकतर दल भाजपा की 'हिंदुत्व' की विचारधारा से सहमत नहीं हैं, लेकिन ये दल भाजपा के साथ गठबंधन में शामिल हुए और सरकार बनाई, जो पाँच साल तक चली।

नोटः यह नक्शा किसी पैमाने के हिसाब से बनाया गया भारत का मानचित्र नहीं है। इसमें दिखाई गई भारत की अंतर्राष्ट्रीय सीमा रेखा को प्रामाणिक सीमा रेखा न माना जाए।

ये सभी महत्त्वपूर्ण बदलाव हैं और आगामी राजनीति इन्हीं बदलावों के दायरे में आकार लेगी। भारत की राजनीति के इस अध्ययन की शुरुआत में हमने चर्चा की थी कि कांग्रेस किस तरह एक प्रभावशाली पार्टी बनकर उभरी। इस स्थिति से चलकर अब हम एक ऐसे पड़ाव पर पहुँचे हैं, जहाँ राजनीतिक प्रतिस्पर्धा कहीं ज़्यादा तेज़ है लेकिन इस प्रतिस्पर्धी राजनीति के बीच मुख्य राजनीतिक दलों में कुछेक मसलों पर सहमति है। अगर राजनीतिक दल इस सहमति के दायरे में सक्रिय हैं, तो जन आंदोलन और संगठन विकास के नए रूप, स्वप्न और तरीकों की पहचान कर रहे हैं। गरीबी, विस्थापन, न्यूनतम मज़दूरी, आजीविका और सामाजिक सुरक्षा के मसले जन आंदोलनों के ज़रिए राजनीतिक एजेंडे के रूप में सामने आ रहे हैं। ये आंदोलन राज्य को उसकी ज़िम्मेदारियों के प्रति सचेत कर रहे हैं। इसी तरह लोग जाति, लिंग, वर्ग और क्षेत्र के संदर्भ में न्याय तथा लोकतंत्र के मुद्दे उठा रहे हैं। हम विश्वासपूर्वक कह सकते हैं कि भारत में लोकतांत्रिक राजनीति जारी रहेगी और यह राजनीति इस अध्याय में वर्णित कुछ चीज़ों के मंथन के बीच आकार ग्रहण करेगी।

जैसा कि आप जानते हैं भारत की आजादी के आसपास कई अन्य देश भी आजाद हुए और लोकतंत्र को अपनाया। हालाँकि, भारत सामाजिक समानता और राष्ट्रीय विकास को बढ़ावा देने में एक महान भूमिका निभाते हुए एक परिपक्व लोकतंत्र के रूप में उभरा, लेकिन उनमें से कुछ देशों में ऐसा नहीं हुआ है। उन कारकों के बारे में आपस में चर्चा करें जिन्होंने भारत में लोकतंत्र को पनपने में सक्षम बनाया है।

17वीं लोकसभा में विभिन्न दलों की स्थिति

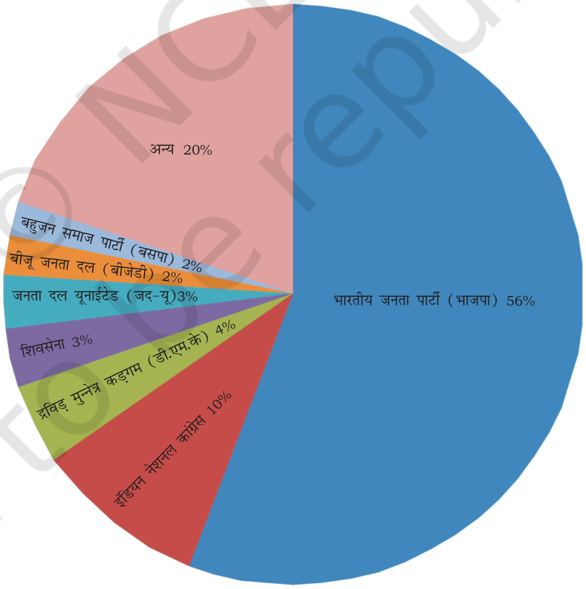

भारतीय जनता पार्टी (भाजपा)	303	जनता दल यूनाईटेड (जद-यू)	16
इंडियन नेशनल कांग्रेस	52	बीजू जनता दल (बीजेडी)	12
द्रविड़ मुन्नेत्र कड़गम (डी.एम.के)	24	बहुजन समाज पार्टी (बसपा)	10
शिवसेना	18	अन्य पार्टियाँ	108

स्रोत: http://loksabha.nic.in

© NCERT not to be republished

प्रश्नावली

1. उन्नी-मुन्नी ने अखबार की कुछ कतरनों को बिखेर दिया है। आप इन्हें कालक्रम के अनुसार व्यवस्थित करें:

(क) मंडल आयोग की सिफारिश को लागू करना
(ख) जनता दल का गठन
(ग) राम जन्मभूमि पर सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय
(घ) इंदिरा गाँधी की हत्या
(ङ) राजग सरकार का गठन
(च) संप्रग सरकार का गठन

2. निम्नलिखित में मेल करें:

(क) सर्वानुमति की राजनीति	(i) शाहबानो मामला
(ख) जाति आधारित दल	(ii) अन्य पिछड़ा वर्ग का उभार
(ग) पर्सनल लॉ और लैंगिक न्याय	(iii) गठबंधन सरकार
(घ) क्षेत्रीय पार्टियों की बढ़ती ताकत	(iv) आर्थिक नीतियों पर सहमति

3. 1989 के बाद की अवधि में भारतीय राजनीति के मुख्य मुद्दे क्या रहे हैं? इन मुद्दों से राजनीतिक दलों के आपसी जुड़ाव के क्या रूप सामने आए हैं?
4. ''गठबंधन की राजनीति के इस नए दौर में राजनीतिक दल विचारधारा को आधार मानकर गठजोड़ नहीं करते हैं।'' इस कथन के पक्ष या विपक्ष में आप कौन-से तर्क देंगे।
5. आपातकाल के बाद के दौर में भाजपा एक महत्त्वपूर्ण शक्ति के रूप में उभरी। इस दौर में इस पार्टी के विकास-क्रम का उल्लेख करें।
6. कांग्रेस के प्रभुत्व का दौर समाप्त हो गया है। इसके बावजूद देश की राजनीति पर कांग्रेस का असर लगातार कायम है। क्या आप इस बात से सहमत हैं? अपने उत्तर के पक्ष में तर्क दीजिए।
7. अनेक लोग सोचते हैं कि सफल लोकतंत्र के लिए दो-दलीय व्यवस्था ज़रूरी है। पिछले तीस सालों के भारतीय अनुभवों को आधार बनाकर एक लेख लिखिए और इसमें बताइए कि भारत की मौजूदा बहुदलीय व्यवस्था के क्या फ़ायदे हैं।
8. निम्नलिखित अवतरण को पढ़ें और इसके आधार पर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दें:

भारत की दलगत राजनीति ने कई चुनौतियों का सामना किया है। कांग्रेस-प्रणाली ने अपना खात्मा ही नहीं किया, बल्कि कांग्रेस के जमावड़े के बिखर जाने से आत्म-प्रतिनिधित्व की नयी प्रवृत्ति का भी ज़ोर बढ़ा। इससे दलगत व्यवस्था और विभिन्न हितों की समाई करने की इसकी क्षमता पर भी सवाल उठे। राजव्यवस्था के सामने एक महत्त्वपूर्ण काम एक ऐसी दलगत व्यवस्था खड़ी करने अथवा राजनीतिक दलों को गढ़ने की है, जो कारगर तरीके से विभिन्न हितों को मुखर और एकजुट करें...

– जोया हसन

(क) इस अध्याय को पढ़ने के बाद क्या आप दलगत व्यवस्था की चुनौतियों की सूची बना सकते हैं?
(ख) विभिन्न हितों का समाहार और उनमें एकजुटता का होना क्यों ज़रूरी है।
(ग) इस अध्याय में आपने अयोध्या विवाद के बारे में पढ़ा। इस विवाद ने भारत के राजनीतिक दलों की समाहार की क्षमता के आगे क्या चुनौती पेश की?

© NCERT not to be republished

खुद करें-खुद सीखें

- इस अध्याय में 2004 के चुनाव (14वीं लोकसभा) तक भारतीय राजनीति की प्रमुख घटनाओं को शामिल किया गया है। इसके बाद लोकसभा चुनाव 2009 में आयोजित किए गए, जिसके दौरान कांग्रेस के नेतृत्व में संप्रग की जीत हुई। 2014 तथा 2019 के चुनाव में भाजपा के नेतृत्व वाली राजग विजेता बन कर उभरी। 17वीं लोकसभा में विभिन्न दलों की स्थिति पृष्ठ 154 पर दर्शाई गई है।
- 17वीं लोकसभा के सदस्यों का एक विस्तृत अध्ययन लोकसभा की वेबसाइट (http://loksabha.nic.in) पर उपलब्ध है।
- भारत निर्वाचन आयोग की वेबसाइट (http://eci.nic.in) से परिणामों के बारे में आँकड़े एकत्र करके 2009 के चुनाव (15वीं लोकसभा) और 2019 के चुनाव (17वीं लोकसभा) में विभिन्न राजनीतिक दलों के चुनावी प्रदर्शन की तुलना करें।
- 2004 के बाद से भारत में प्रमुख राजनीतिक घटनाओं का एक घटनाक्रम तैयार करें और अपनी कक्षा में उस पर चर्चा करें।

सन् 2004 से संसद में दलीय स्थिति

	पार्टी	2004	2009	2014	2019
1	आम आदमी पार्टी	–	–	4	1
2	ऑल इंडिया अन्ना द्रविड़ मुन्नेत्र कड़गम	0	9	37	1
3	बहुजन समाज पार्टी	19	21	–	10
4	भारतीय जनता पार्टी	138	116	282	303
5	बीजू जनता दल	11	14	20	12
6	कम्यूनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया—मार्क्सवादी	43	16	9	3
7	कम्यूनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया	10	4	1	2
8	द्रविड़ मुन्नेत्र कड़गम	16	18	–	24
9	इंडियन नेशनल कांग्रेस	145	206	44	52
10	जनता दल—यूनाइटेड	8	20	2	16
11	जनता दल—सेक्यूलर	3	3	2	1
12	लोक जनशक्ति पार्टी	4	–	6	6
13	नेशनलिस्ट कांग्रेस पार्टी	9	9	6	5
14	राष्ट्रीय जनता दल	24	4	4	–
15	राष्ट्रीय लोकदल	3	5	1	–
16	समाजवादी पार्टी	36	23	5	5
17	शिरोमणि अकाली दल	8	4	4	2
18	शिवसेना	12	11	18	18
19	अन्य	54	60	98	82
	कुल	543	543	543	543

संसद सदस्यों की कुल संख्या – 543 (राज्यों से 530 और केंद्रशासित प्रदेशों से 13)

not to be republished © NCERT

केन्द्रीय सतर्कता आयोग
CENTRAL VIGILANCE COMMISSION

सत्यनिष्ठा प्रतिज्ञा
INTEGRITY PLEDGE

मेरा विश्वास है कि हमारे देश की आर्थिक, राजनीतिक तथा सामाजिक प्रगति में भ्रष्टाचार एक बड़ी बाधा है। मेरा विश्वास है कि भ्रष्टाचार का उन्मूलन करने के लिए सभी संबंधित पक्षों जैसे सरकार, नागरिकों तथा निजी क्षेत्र को एक साथ मिल कर कार्य करने की आवश्यकता है।

मेरा मानना है कि प्रत्येक नागरिक को सतर्क होना चाहिए तथा उसे सदैव ईमानदारी तथा सत्यनिष्ठा के उच्चतम मानकों के प्रति वचनबद्ध होना चाहिए तथा भ्रष्टाचार के विरुद्ध संघर्ष में साथ देना चाहिए।

अत:, मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि :-

- जीवन के सभी क्षेत्रों में ईमानदारी तथा कानून के नियमों का पालन करूँगा ;
- ना तो रिश्वत लूँगा और ना ही रिश्वत दूँगा ;
- सभी कार्य ईमानदारी तथा पारदर्शी रीति से करूँगा ;
- जनहित में कार्य करूँगा ;
- अपने निजी आचरण में ईमानदारी दिखाकर उदाहरण प्रस्तुत करूँगा ;
- भ्रष्टाचार की किसी भी घटना की रिपोर्ट उचित एजेन्सी को दूँगा ।

केंद्रीय सतर्कता आयोग (सी.वी.सी.) के बारे में जानकारी के लिए लॉग ऑन करें,
www.cvc.nic.in

© NCERT not to be republished

स्रोत: भारत निर्वाचन आयोग।